



Neutral Citation No. 2026:AHC-LKO:12707-DB

इलाहाबाद उच्च न्यायालय

लखनऊ पीठ

मध्यस्थता एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37 के अंतर्गत

अपील संख्या - 5 वर्ष 2024

संजय गांधी पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, लखनऊ निदेशक के माध्यम से

...अपीलकर्ता(गण)

बनाम

मेसर्स त्रिशूल एंटरप्राइजेज, अपने भागीदार श्री आशीष गुप्ता के माध्यम से

...प्रत्यर्थी(गण)

अपीलकर्ता(गण) के अधिवक्ता : प्रीतीश कुमार, शुभम त्रिपाठी

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : आशीष गुप्ता (व्यक्तिगत रूप से)

ए.एफ.आर.

निर्णय आरक्षित दिनांक : 21.01.2026

निर्णय प्रदत्त दिनांक : 18.02.2026

मुख्य न्यायाधीश का न्यायालय

माननीय मुख्य न्यायाधीश अरुण भंसाली

माननीय न्यायमूर्ति जसप्रीत सिंह

(माननीय न्यायमूर्ति जसप्रीत सिंह द्वारा प्रदत्त)

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



1. यहाँ चुनौती के अधीन वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ द्वारा मध्यस्थता वाद संख्या 119 वर्ष 2020 (संजय गांधी पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज लखनऊ बनाम मैसर्स त्रिशूल एंटरप्राइजेस) में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 29.11.2023 है, जिसके द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (इसके बाद 1996 का अधिनियम कहा गया है) की धारा 34 के तहत एक याचिका को खारिज कर दिया गया था, जिसके परिणामस्वरूप एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय दिनांक 20.08.2020 को बरकरार रखा गया है।

2. वर्तमान अपील में शामिल विवाद को समझने के लिए, इस अपील तक ले जाने वाले प्रासंगिक तथ्यों को नोट करना उचित होगा।

3. संजय गांधी पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज (इसके बाद एसजीपीजीआई कहा गया है) के परिसर में भूदृश्य (लैंडस्केप) के रखरखाव के उद्देश्यों के लिए अपीलकर्ता और प्रतिवादी के बीच दिनांक 16.04.2008 को एक समझौता किया गया था, जिसकी संख्या 1 वर्ष 2008-2009 थी। यह समझौता तीन वर्ष की अवधि के लिए था और इसे एक नई निविदा प्रक्रिया के अंतिम रूप दिए जाने तक या तीन महीने, जो भी पहले हो, तक बढ़ाया जा सकता था। उक्त समझौते में, अन्य बातों के साथ-साथ, एक मध्यस्थता खंड शामिल था।

4. प्रतिवादी ने प्रारंभ में रिट याचिका संख्या 10358 (एम/बी) वर्ष 2015 दायर की थी, जिसमें प्रतिवादी ने अपीलकर्ता को दिनांक 16.04.2008 के समझौते के खंड 27 की शर्तों के अनुसार एक मध्यस्थ नियुक्त करने का निर्देश देने वाले परमादेश की प्रकृति में एक रिट की मांग की थी। परमादेश की प्रकृति में एक और रिट मांगी गई थी, जिसमें अपीलकर्ता को 6,12,000/- रुपये की सुरक्षा राशि जारी करने के साथ-साथ 10,000/- रुपये का भुगतान करने का निर्देश देने की मांग की गई थी, जिसे कथित तौर पर अपीलकर्ता द्वारा रोक लिया गया था। इस न्यायालय की खंडपीठ के समक्ष, अपीलकर्ता (जो रिट न्यायालय में प्रतिवादी था) द्वारा सूचित किया गया था कि डॉ. सी.एम. पांडेय को पहले ही एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया जा चुका है। उपरोक्त कथन को ध्यान में रखते हुए, रिट याचिका को इस छूट के साथ निस्तारित कर दिया गया कि प्रतिवादी एकमात्र मध्यस्थ के समक्ष अपने दावों का न्यायनिर्णयन करा सकता है।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



5. रिट याचिका संख्या 10358 (एम/बी) वर्ष 2015 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 06.11.2025 के अनुसरण में, प्रतिवादी ने एकमात्र मध्यस्थ, अर्थात् डॉ. सी.एम. पांडेय के समक्ष अपना दावा विवरण दायर किया। एकमात्र मध्यस्थ की नियुक्ति के बावजूद, उन्होंने कोई कार्यवाही नहीं की, जिसके कारण प्रतिवादी को इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष अवमानना याचिका संख्या 427 (सी) वर्ष 2016 दायर करनी पड़ी और अवमानना कार्यवाही में नोटिस जारी होने पर, एकमात्र मध्यस्थ ने मामले को आगे बढ़ाया। हालांकि, उक्त मध्यस्थ कार्यवाही को समाप्त नहीं कर सके क्योंकि वे सेवानिवृत्त हो गए।

6. एक बार फिर प्रतिवादी को उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने के लिए मजबूर होना पड़ा और इस बार उसने 1996 के अधिनियम की धारा 11 के तहत एक याचिका दायर की, जिसकी संख्या मध्यस्थता आवेदन संख्या 29 वर्ष 2017 थी, जिसका निर्णय 15.03.2019 को किया गया और एक नए मध्यस्थ की नियुक्ति की गई। इस नवनियुक्त एकमात्र मध्यस्थ ने अभिवचनों के आदान-प्रदान के चरण से आगे बढ़ाते हुए मध्यस्थता कार्यवाही नए सिरे से शुरू की। उक्त मध्यस्थता कार्यवाही में प्रतिवादी ने 11.12.2015 को अपना दावा विवरण दायर किया। अपीलकर्ता (जो मध्यस्थ के समक्ष प्रतिवादी था) ने दिनांक 26.07.2019 को एक प्रति-दावे सहित अपना प्रतिवाद विवरण दायर किया। पक्षों ने साक्ष्य प्रस्तुत किए, और तत्पश्चात एकमात्र मध्यस्थ ने दावों को आंशिक रूप से स्वीकार कर लिया और 20.08.2020 को अपना अधिनिर्णय दिया।

7. अपीलकर्ता ने उक्त अधिनिर्णय दिनांक 20.08.2020 को लखनऊ स्थित वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1 के समक्ष 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत एक याचिका दायर करके चुनौती दी, जिसे मध्यस्थता वाद संख्या 119 वर्ष 2020 के रूप में पंजीकृत किया गया था।

8. लखनऊ स्थित वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1 ने पक्षकारों को सुनने के बाद अधिनिर्णय में कोई त्रुटि नहीं पाई, इसलिए उसने अपने निर्णय दिनांक 29.11.2023 के माध्यम से अधिनिर्णय

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

की पुष्टि कर दी, जो 1996 के अधिनियम की धारा 37 के तहत तरजीह दी गई वर्तमान अपील में चुनौती के अधीन है।

9. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री प्रतीश कुमार, जिन्हें श्री शुभम त्रिपाठी द्वारा सहायता प्रदान की गई, ने मुख्य रूप से एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय के साथ-साथ लखनऊ स्थित वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1 द्वारा पारित निर्णय पर हमला करने के लिए तीन आधार उठाए:

(i) विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि मध्यस्थ ने सुरक्षा राशि की वापसी से संबंधित प्रतिवादी द्वारा उठाए गए दावे को स्वीकार करने में एक स्पष्ट त्रुटि की है, जो दावे की विषय-वस्तु थी और एकमात्र मध्यस्थ द्वारा तैयार किए गए वाद-पद संख्या 15 के अंतर्गत शामिल थी। यह प्रस्तुत किया गया कि प्रतिवादी ने अपनी दावा याचिका के पैराग्राफ 15 में यह दलील दी थी कि अनुबंध की अवधि समाप्त होने और यहाँ तक कि दोष दायित्व अवधि समाप्त होने के बाद भी, अपीलकर्ता ने 6,12,000/- रुपये की सुरक्षा राशि जारी नहीं की और इसके अलावा 10,000/- रुपये की राशि को अवैध रूप से रोक लिया गया।

(ii) विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने इंगित किया कि यह दावा पूरी तरह से बिना किसी आधार के था क्योंकि वर्ष 2008-2009 के अनुबंध संख्या 1 की शर्तों के अनुसार, प्रतिवादी ने केवल 3,35,000/- रुपये की नकद सुरक्षा जमा की थी और वह राशि प्रतिवादी को पहले ही वापस की जा चुकी थी।

(iii) यह भी इंगित किया गया कि प्रतिवाद विवरण में दावा विवरण के पैराग्राफ-15 का उत्तर देते हुए यह विशेष रूप से दलील दी गई थी कि वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 के तहत प्रतिवादी ने केवल 3,35,000/- रुपये की सुरक्षा राशि दी थी, जिसे वापस कर दिया गया था। ऐसा कोई तरीका नहीं था कि 6,12,000/- रुपये की कोई सुरक्षा राशि का भुगतान किया गया हो। इसके अलावा, प्रतिवादी ने सुरक्षा राशि की वसूली की मांग के लिए एक ऐसा दावा पेश किया जो वर्ष 2013-2014 के एक अन्य अनुबंध संख्या 107 से संबंधित था, जो पूरी तरह से एक अलग अनुबंध था और वह मध्यस्थता कार्यवाही की विषय-वस्तु नहीं था। प्रतिवादी ने दूसरे

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अनुबंध के संबंध में कोई दावा नहीं उठाया था, फिर भी मध्यस्थ को गुमराह करके वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 से संबंधित मध्यस्थता कार्यवाही में एक अलग अनुबंध से संबंधित उक्त दावे को शामिल कर लिया गया।

(iv) विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि एकमात्र मध्यस्थ के समक्ष विवाद केवल वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 के संबंध में था न कि बाद के संदर्भ के संबंध में जो अस्तित्व में आया था, अर्थात् वर्ष 2013-2014 का अनुबंध संख्या 107। बाद के अनुबंध से उत्पन्न होने वाले किसी भी विवाद को मध्यस्थता के लिए संदर्भित करने का न तो कभी कोई दावा था और न ही कोई अनुरोध था, इस प्रकार, उक्त दावे पर वर्तमान मध्यस्थता कार्यवाही में विचार नहीं किया जा सकता था। एकमात्र मध्यस्थ, जो केवल अनुबंध की संताति है, अपनी अधिकारिता का विस्तार ऐसे दावे को शामिल करने के लिए नहीं कर सकता था जो कभी मध्यस्थता के संदर्भ का विषय-वस्तु नहीं था।

(v) विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि एकमात्र मध्यस्थ ने सुरक्षा राशि की वापसी के दावे को शामिल करने के लिए अपने क्षेत्राधिकार का घोर उल्लंघन किया जो विचाराधीन अनुबंध या मध्यस्थ को किए गए संदर्भ से संबंधित नहीं था। एकमात्र मध्यस्थ ने जानबूझकर इस एकमात्र आधार पर दावे को स्वीकार कर लिया कि चूंकि दावा उन्हीं पक्षों के बीच था और उक्त दावे का कोई स्पष्ट खंडन नहीं है, इसलिए न्याय के हित में यह राशि प्रदान की गई। यह स्पष्ट रूप से एक प्रत्यक्ष अवैधता थी। तदनुसार, उपरोक्त आधार पर अधिनिर्णय अधिकारिता के अतिक्रमण और एक स्पष्ट त्रुटि से ग्रसित था जिसने अधिनिर्णय को दूषित कर दिया।

10. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे यह तर्क दिया है कि एकमात्र मध्यस्थ ने कर्मचारियों के भविष्य निधि के प्रति अंशदान से संबंधित प्रतिवादी के दावे को स्वीकार करने में एक गंभीर भूल की है, जो एकमात्र मध्यस्थ द्वारा तैयार किए गए वाद-पद संख्या 5 और 12 के अंतर्गत शामिल था।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(i) यह प्रस्तुत किया गया कि वर्तमान अनुबंध कभी भी एक श्रम अनुबंध नहीं था और न ही अपीलकर्ता से किसी कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान की प्रतिपूर्ति करने की अपेक्षा की गई थी, तथा ऐसा दायित्व पूरी तरह से प्रतिवादी की जिम्मेदारी थी। न तो अपीलकर्ता मुख्य नियोक्ता था और न ही पक्षकारों के बीच समझौते में ऐसा कोई खंड था जिसके द्वारा कर्मचारी भविष्य निधि के तहत प्रतिवादी के दायित्व का विस्तार अपीलकर्ता पर किया जा सकता था।

(ii) एकमात्र मध्यस्थ ने अनुबंध की शर्तों को पूरी तरह से गलत पढ़ा और कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान से संबंधित उपरोक्त दावे को स्वीकार करके उसने वास्तव में अनुबंध को नए सिरे से लिखा है, जो न तो एकमात्र मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र में था और न ही इसे कानून में स्वीकार किया जा सकता था।

11. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने आगे यह दलील दी है कि एकमात्र मध्यस्थ ने शास्ति लगाकर अपीलकर्ता द्वारा कथित तौर पर काटी गई 57,521/- रुपये की राशि प्रदान करने में अपने क्षेत्राधिकार का उल्लंघन किया है। यह तर्क दिया गया कि समझौते ने स्पष्ट रूप से अपीलकर्ता को प्रतिवादी के काम में किसी भी गलती के कारण अपीलकर्ता को हुए किसी भी नुकसान के मामले में कोई भी कटौती करने और प्रतिवादी पर शास्ति लगाने की शक्ति प्रदान की थी। इन परिस्थितियों में, शास्ति लगाने को कानूनन गलत मानकर और प्रतिवादी के बिलों से शास्ति की राशि काटने को गलत ठहराकर दावे को स्वीकार करना न्यायोचित नहीं था। अतः इस गिनती पर भी अधिनिर्णय त्रुटिपूर्ण था और निरस्त किए जाने योग्य था।

12. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी तर्क दिया कि उपरोक्त अवैधता, जो मामले की जड़ तक जाती थी और जिसने एकमात्र मध्यस्थ के क्षेत्राधिकार को प्रभावित किया जिससे अधिनिर्णय प्रत्यक्ष रूप से अवैध हो गया, उसे लखनऊ स्थित वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1 के समक्ष प्रदर्शित किया गया था। हालांकि, उक्त न्यायालय ने मामले पर बहुत संकीर्ण दृष्टिकोण अपनाया और न्यायालय के ध्यान में लाई गई सामग्री पर विचार किए बिना अत्यंत सरसरी तौर पर 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका को खारिज कर दिया, जो अपने आप में क्षेत्राधिकार का त्रुटिपूर्ण प्रयोग था। इसलिए, इस अपील को स्वीकार करने के बाद 1996 के

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अधिनिर्णय की धारा 34 के तहत याचिका को खारिज करने वाले वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ के निर्णय दिनांक 29.11.2023 को तथा अधिनिर्णय दिनांक 20.08.2020 को भी निरस्त किया जाना चाहिए।

13. अपनी दलीलों के समर्थन में, अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने छत्तीसगढ़ राज्य बनाम एसएएल उद्योग (पी) लिमिटेड, (2022) 2 एससीसी 275 और पीएसए सीकल टर्मिनल्स प्रा. लिमिटेड बनाम बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज ऑफ वी.ओ. चिदंबरनार पोर्ट ट्रस्ट तूतुकुड़ी और अन्य, एआईआर 2021 एससी 4661 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है। उन्होंने ग्रुप 4 सिक्योरिटीज गार्डिंग लिमिटेड बनाम एम्प्लॉइज प्रोविडेंट फंड अपीलेट ट्रिब्यूनल और अन्य, 2011 लॉसूट (दिल्ली) 3837 में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय पर भी भरोसा किया है।

14. प्रतिवादी फर्म के एक भागीदार श्री आशीष गुप्ता व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुए और उन्होंने प्रस्तुत किया कि एकमात्र मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय किसी भी स्पष्ट त्रुटि से ग्रसित नहीं है और न ही वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ द्वारा पारित निर्णय को त्रुटिपूर्ण कहा जा सकता है, तथा इसमें इस न्यायालय के किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

(i). श्री गुप्ता ने प्रस्तुत किया कि शुरुआत से ही प्रतिवादी ने सुरक्षा राशि के संबंध में अपना दावा किया था और किसी भी समय अपीलकर्ता द्वारा इसका खंडन नहीं किया गया था और न ही यह आपत्ति ली गई थी कि यह वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 से संबंधित नहीं था।

(ii). श्री गुप्ता ने इंगित किया कि जब उन्होंने अपनी पहली रिट याचिका संख्या 10358 (एम/बी) वर्ष 2015 दायर की थी, तब प्रतिवादी ने स्पष्ट रूप से 6,12,000/- रुपये की सुरक्षा राशि की वापसी से संबंधित राहत की मांग की थी। यहाँ तक कि रिट न्यायालय के समक्ष भी अपीलकर्ता द्वारा कभी यह आरोप नहीं लगाया गया था कि उक्त सुरक्षा राशि विचाराधीन अनुबंध से संबंधित नहीं थी।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(iii) श्री गुप्ता द्वारा आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि वह अपीलकर्ता ही था जिसने रिट न्यायालय को सूचित किया था कि उसने डॉ. सी.एम. पांडेय को मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया है। चूंकि अनुबंध के अनुसार अपीलकर्ता को मध्यस्थ नियुक्त करना आवश्यक था, यदि अपीलकर्ता उचित समझता तो वह दोनों अनुबंधों के लिए एक साथ उक्त मध्यस्थ को नियुक्त कर सकता था। हालांकि, इस स्तर पर यह नहीं कहा जा सकता कि एकमात्र मध्यस्थ ने वर्ष 2013-2014 के दूसरे अनुबंध संख्या 107 से संबंधित सुरक्षा राशि की वापसी के दावे को स्वीकार करने में अपने अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है।

(iv) श्री गुप्ता ने आगे यह दलील दी है कि सी.पी.सी. के आदेश 2 नियम 2 के तहत प्रतिवादी के लिए अपने सभी दावों को एक साथ जोड़ने का विकल्प खुला था और इसलिए चूंकि सुरक्षा राशि बकाया थी, भले ही वह बाद के अनुबंध से संबंधित थी और वापस नहीं की गई थी, अतः प्रतिवादी इस संबंध में अपना दावा करने में न्यायसंगत था। इसके विपरीत, यदि प्रतिवादी अपने सभी दावों को उठाने में विफल रहता, तो सी.पी.सी. के आदेश 2 नियम 2 में निहित रोक को देखते हुए उसे अपना दावा करने से रोक दिया जाता।

(v) उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि इस तथ्य से कोई इनकार नहीं है कि उक्त राशि बकाया थी और उसे वापस किया जाना आवश्यक था। मामले के इस दृष्टिकोण को देखते हुए, एकमात्र मध्यस्थ दावे को स्वीकार करने में न्यायसंगत था, जिसे गलत नहीं कहा जा सकता। इसके अलावा, एक बार 'कोई खंडन नहीं' के आधार पर अधिनिर्णय दे दिया गया है जो रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों पर आधारित है, तो ऐसे निष्कर्ष को 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत न्यायालय के समक्ष चुनौती नहीं दी जा सकती है और इसी कारण से न्यायालय ने 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत अपीलकर्ता की याचिका को खारिज कर दिया था। स्पष्ट रूप से, 1996 के अधिनियम की धारा 37 के तहत हस्तक्षेप करने का इस न्यायालय का अधिकार क्षेत्र धारा 34 के तहत हस्तक्षेप के दायरे से संकीर्ण है, इसलिए यह इस न्यायालय को अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं देगा।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

15. श्री गुप्ता ने अपनी दलीलों को आगे बढ़ाते हुए इस बात पर बल दिया कि अनुबंध के लिए अपनी बोली जमा करते समय, उन्होंने दिनांक 01.10.2007 और 30.10.2007 के दो पत्र संलग्न किए थे जो उनकी बोली का हिस्सा थे और इसे अनुबंध के खंड 23 के निबंधनों के अनुसार अनुबंध का हिस्सा बनाया गया था। अनुबंध का हिस्सा रहे इन दोनों पत्रों के अर्थपूर्ण पठन से यह स्पष्ट हो जाएगा कि प्रतिवादी ने अनुबंध के लिए अपनी दरें केवल आयकर को शामिल करते हुए उद्धृत की थीं। यदि कोई अन्य नया कर या शुल्क लगाया जाता, तो उसका भुगतान अपीलकर्ता संस्थान द्वारा उद्धृत दरों के अतिरिक्त किया जाना था।

(i) उपरोक्त खंड 23 और दिनांक 01.10.2007 व 30.10.2007 के दो पत्रों पर भरोसा करते हुए यह प्रस्तुत किया गया कि प्रतिवादी ने कर्मचारी भविष्य निधि में अपना अंशदान किया था और अपीलकर्ता को अपने हिस्से का अंशदान करना आवश्यक था। चूंकि ऐसा नहीं किया गया, इसलिए प्रतिवादी ने अपना दावा उठाया था जिसे मध्यस्थ द्वारा स्वीकार कर लिया गया और 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका को खारिज करते हुए न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया। एकमात्र मध्यस्थ द्वारा लिया गया एक ऐसा दृष्टिकोण जो संभावित/तर्कसंगत है, उसमें 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है और निश्चित रूप से 1996 के अधिनियम की धारा 37 के तहत अपील में तो बिल्कुल नहीं। इस प्रकार, उक्त अधिनिर्णय किसी भी ऐसी त्रुटि से ग्रसित नहीं है जिसके लिए इस न्यायालय से हस्तक्षेप की आवश्यकता हो।

16. श्री गुप्ता ने यह भी इंगित किया कि अपीलकर्ता संस्थान का शास्ति लगाना और उसे प्रतिवादी के बिलों से काटना, विशेष रूप से प्रतिवादी को कोई नोटिस दिए बिना, न्यायसंगत नहीं था। (i) इस संबंध में, प्रतिवादी ने अपना दावा उठाया था और अपीलकर्ता रिकॉर्ड पर ऐसा कोई साक्ष्य नहीं ला सका जो शास्ति लगाने और प्रतिवादी के बिल से कटौती को न्यायोचित ठहरा सके, इसलिए प्रतिवादी द्वारा उठाए गए दावे को स्वीकार कर लिया गया।

(ii) यह कहा गया कि न तो अधिनिर्णय में और न ही वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ द्वारा पारित आदेश में कोई प्रत्यक्ष त्रुटि है, इसलिए अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

की दलील को खारिज किया जाना चाहिए। वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ द्वारा पारित आदेश द्वारा संपुष्ट किए गए अधिनिर्णय में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और योग्यता से विहीन होने के कारण अपील खारिज किए जाने योग्य है।

17. श्री गुप्ता ने बी.आर. पाटिल बनाम तुलसा वाई. सावरकर, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 240 में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है।

18. इस न्यायालय ने अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता तथा प्रतिवादी की ओर से व्यक्तिगत रूप से उपस्थित श्री आशीष गुप्ता को सुना है और रिकॉर्ड का भी सूक्ष्मता से परिशीलन किया है।

19. इस न्यायालय को यूसीएम कोल कंपनी लिमिटेड बनाम अडानी एंटरप्राइजेस लिमिटेड, 2025 एससीसी ऑनलाइन ऑल 7608 में तथा मैसर्स रीजेनवो मोबाइल प्राइवेट लिमिटेड लखनऊ बनाम मैसर्स सियोगी एंटरप्राइजेस और अन्य; 2026(1) एडीजे 250 (डीबी)(एलबी) में 1996 के अधिनियम की धारा 37 के तहत एक अपील के दायरे पर विचार करने का अवसर मिला था। उपरोक्त दोनों निर्णयों में उल्लिखित मापदंडों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने संबंधित पक्षकारों की दलीलों की जांच की है।

20. शुरुआत में ही यह देखा जा सकता है कि यह निर्विवाद है कि पक्षकारों के बीच दो अलग-अलग अनुबंध किए गए थे। यह भी निर्विवाद है कि दिनांक 16.04.2008 का पहला अनुबंध, जिसकी संख्या वर्ष 2007-2008 का अनुबंध संख्या 1 थी, तीन वर्ष की अवधि के लिए था जो वर्ष 2011 में समाप्त हो गया था। यह भी निर्विवाद है कि दूसरा अनुबंध, जिसकी संख्या वर्ष 2013-2014 की संख्या 107 थी, वर्ष 2011 में पहले अनुबंध के समाप्त होने के बाद किया गया था। यह भी निर्विवाद है कि पहले अनुबंध (वर्ष 2007-2008 का अनुबंध संख्या 1) के तहत प्रतिवादी ने 3,35,000/- रुपये की नकद सुरक्षा जमा प्रस्तुत की थी। यह भी निर्विवाद है कि पहले अनुबंध के तहत सुरक्षा राशि अपीलकर्ता द्वारा जारी की गई थी और प्रतिवादी द्वारा प्राप्त की गई थी। यह भी निर्विवाद है कि 6,12,000/- रुपये की राशि वह सुरक्षा राशि थी जो प्रतिवादी द्वारा वर्ष 2013-2014 के दूसरे अनुबंध संख्या 107 के संदर्भ में दी गई थी।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



21. इस पृष्ठभूमि में, यह नोट करना प्रासंगिक होगा कि प्रतिवादी द्वारा दायर पहली रिट याचिका संख्या 10358 (एम/बी) वर्ष 2015 में प्रतिवादी ने मुख्य रूप से अपीलकर्ता संस्थान को एक एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त करने का आदेश देने वाले परमादेश की राहत मांगी थी। यह रिट याचिका की प्रति से स्पष्ट है, जो रिकॉर्ड पर है। इस न्यायालय की एक समतुल्य पीठ ने 06.11.2015 को उक्त रिट याचिका को इस निर्देश के साथ निस्तारित कर दिया था कि वर्तमान प्रतिवादी अपने दावे संबंधित मध्यस्थ के समक्ष प्रस्तुत करे, जिसे मामले को देखने और तदनुसार निर्णय लेने की आवश्यकता थी। आदेश दिनांक 06.11.2025 का प्रासंगिक भाग संदर्भ की सुगमता के लिए नीचे पुनरुत्पादित किया जा रहा है:-

"याचिकाकर्ता ने दिनांक 16.4.2008 को अपने और संजय गांधी पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, लखनऊ के बीच एक समझौता किया था और वह समझौते के खंड-27 के तहत प्रदान किए गए विकल्प के माध्यम से न्यायालय से बाहर अपने विवाद को सुलझाना चाहता है।

संजय गांधी पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, लखनऊ के विद्वान अधिवक्ता श्री आई.पी. सिंह के कनिष्ठ अधिवक्ता श्री रजनीश कुमार ने प्रस्तुत किया है कि विवाद के निपटारे के लिए संजय गांधी पोस्ट ग्रेजुएट इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज, लखनऊ के बायोस्टैटिक्स और हेल्थ इंफॉर्मेटिक्स विभाग के प्रमुख डॉ. सी.एम. पांडेय को विवाद सुलझाने के लिए पहले ही मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया जा चुका है।

उपरोक्त दलील को ध्यान में रखते हुए, हम इसके द्वारा याचिकाकर्ता को संबंधित मध्यस्थ के समक्ष अपना दावा प्रस्तुत करने का निर्देश देते हैं, जो मामले की जांच करेंगे और तदनुसार निर्णय लेंगे।

तदनुसार, यह याचिका निस्तारित की जाती है।"

22. उपरोक्त आदेश के परिशीलन से यह संकेत मिलेगा कि इसमें विशेष रूप से पक्षकारों के बीच दिनांक 16.04.2008 को हुए समझौते का संदर्भ दिया गया था। यह उल्लेख करना भी

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्रासंगिक होगा कि पूरी रिट याचिका में भी प्रतिवादी ने बाद के अनुबंध संख्या 107 वर्ष 2013-2014 से संबंधित कोई संदर्भ नहीं उठाया था। इस प्रकार, खंडपीठ द्वारा पारित आदेश दिनांक 06.11.2015 से केवल यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रतिवादी को एकमात्र मध्यस्थ द्वारा अपने दावों का न्यायनिर्णयन कराने की स्वतंत्रता दी गई थी।

23. इस संबंध में, यदि प्रतिवादी द्वारा दायर दावा विवरण का परिशीलन किया जाए, तो यह प्रकट होगा कि यह भी वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 से संबंधित है और इसमें बाद के अनुबंध संख्या 107 वर्ष 2013-2014 का कोई संदर्भ नहीं दिया गया है। इस स्तर पर, यह नोट करना भी प्रासंगिक होगा कि वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा दायर प्रति-दावे वाले प्रतिवाद विवरण के पैराग्राफ-15 में एक विशिष्ट दलील ली गई थी जिसमें सुरक्षा राशि के लिए वर्तमान प्रतिवादी द्वारा उठाए गए दावे का खंडन किया गया था। संदर्भ की सुगमता के लिए प्रतिवाद विवरण का पैराग्राफ-15 नीचे पुनरुत्पादित किया जा रहा है:-

"यह कि दावा विवरण के पैराग्राफ 15 में उठाया गया दावा संख्या 15 याचिकाकर्ता की 6,12,000/- रुपये की सुरक्षा जमा राशि को रोके रखने से संबंधित है। वर्तमान मामले में अनुबंध के खंड 24 के परिशीलन से यह प्रकट होगा कि जहाँ तक वर्तमान अनुबंध का संबंध है, दावेदार (ठेकेदार) द्वारा की गई सुरक्षा जमा राशि 3,35,000/- रुपये थी न कि 6,12,000/- रुपये। यहाँ तक कि 3,35,000/- रुपये की सुरक्षा जमा राशि भी दावेदार (ठेकेदार) को जारी की जा चुकी है। हालांकि, याचिकाकर्ता ने वर्तमान दावा याचिका में बागवानी के विकास से संबंधित एक अन्य अनुबंध को मिला दिया है, जो अनुमेय नहीं है और वर्तमान मध्यस्थ के दायरे से परे है। उक्त अनुबंध, जो वर्ष 2013 का अनुबंध संख्या 107 है, इस माननीय मध्यस्थ अधिकरण के समक्ष मध्यस्थता की विषय-वस्तु नहीं है और इसलिए, उक्त अलग अनुबंध संख्या 107 वर्ष 2013-14 से संबंधित किसी भी दावे को दावेदार (ठेकेदार) द्वारा कायम या पोषणीय नहीं रखा जा सकता है और इस प्रकार वह इस माननीय मध्यस्थ अधिकरण द्वारा खारिज किए जाने योग्य है।"

24. उपरोक्त पैराग्राफ के परिशीलन से यह प्रकट होगा कि इसमें स्पष्ट रूप से कहा गया था कि वर्ष 2013-2014 का अनुबंध संख्या 107 मध्यस्थता कार्यवाही की विषय-वस्तु नहीं था और

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

मध्यस्थ अधिकरण वर्तमान कार्यवाही में किसी भिन्न अनुबंध के दावे पर विचार नहीं कर सकता था।

25. प्रतिवादी इस तथ्य का खंडन नहीं कर सका कि जब मध्यस्थ अधिकरण के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत किए गए, तब वर्ष 2013-2014 के अलग अनुबंध संख्या 107 से संबंधित कोई दलील नहीं उठाई गई और न ही इसे विषय-वस्तु बनाया गया। अपीलकर्ता द्वारा ली गई स्पष्ट दलील के बावजूद, प्रतिवादी द्वारा इस संबंध में यह साबित करने के लिए कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया कि वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 से संबंधित संदर्भ के दायरे में, वर्ष 2013-2014 के अनुबंध से संबंधित दावे को उसी मध्यस्थता कार्यवाही में शामिल किया जा सकता था। यह भी स्थापित नहीं किया जा सका कि प्रतिवादी ने दोनों अनुबंधों के संबंध में विवाद उठाए थे, बल्कि रिकॉर्ड यह दर्शाता है कि जो विवाद उठाए गए थे वे विशेष रूप से वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 के संबंध में थे। रिकॉर्ड पर न तो ऐसे अभिवचन और न ही साक्ष्य लाए गए जो यह संकेत दे सकें कि बाद के अनुबंध के दावों को भी उठाया या शामिल किया गया था।

26. प्रतिवादी इस तथ्य का खंडन नहीं कर सका कि जो एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किया गया था, चाहे वे डॉ. सी. एम. पांडेय हों या दिनांक 22.02.2019 के आदेश द्वारा नियुक्त मध्यस्थ, दोनों ने वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 से उत्पन्न होने वाले विवादों से संबंधित संदर्भ को ग्रहण किया था और वर्ष 2013-2014 के अनुबंध संख्या 107 से संबंधित कोई भी विवाद मध्यस्थ अधिकरण को संदर्भित नहीं किया गया था। मामले के इस दृष्टिकोण को देखते हुए, मध्यस्थ अधिकरण का गठन केवल वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 के संबंध में उत्पन्न विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए वर्ष 2007-2008 के अनुबंध संख्या 1 से निकलने वाले मध्यस्थता खंड संख्या 27 के निबंधनों के अनुसार किया गया था।

27. अब यह विवाद रहित रूप से सुस्थापित हो चुका है कि मध्यस्थ अनुबंध की संताति है और वह केवल उन्हीं विवादों का न्यायनिर्णयन कर सकता है जो पक्षकारों द्वारा उसे संदर्भित किए

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



गए हों। एकमात्र मध्यस्थ के लिए अनुबंध की शर्तों या संदर्भ की शर्तों से परे जाना खुला नहीं है।

28. मामले के इस पहलू पर इस न्यायालय द्वारा **मैसर्स रीजेनवो मोबाइल (उपरोक्त)** के मामले में विचार किया गया था, जिसमें पैराग्राफ 38 और 40 में निम्नानुसार संज्ञान लिया गया था:-

"38. यह जांचना प्रासंगिक होगा कि मध्यस्थता खंड की व्याख्या कैसे की जानी चाहिए। क्या इसके लिए कड़े या उदार दृष्टिकोण से व्याख्या की आवश्यकता है ताकि मध्यस्थता योग्य विवादों के दायरे का विस्तार किया जा सके, भले ही वे खंड/समझौते में स्पष्ट रूप से प्रदान न किए गए हों; इस पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा (i) **हर्षा कंस्ट्रक्शंस बनाम यूनियन ऑफ इंडिया, (2014) 9 एससीसी 246**, (ii) **यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम हुंडई इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड, (2018) 17 एससीसी 607**, (iii) **ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम नर्भरम पावर एंड स्टील (पी) लिमिटेड, (2018) 6 एससीसी 534** में विचार किया गया था। उपरोक्त निर्णयों पर सर्वोच्च न्यायालय ने अपने बाद के निर्णय **इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम एनसीसी लिमिटेड, (2023) 2 एससीसी 539** और **एम्मार (इंडिया) लिमिटेड बनाम तरुण अग्रवाल प्रोजेक्ट्स एलएलपी, (2023) 13 एससीसी 661** में भरोसा किया। दोहराव से बचने के लिए, एम्मार (उपरोक्त) के प्रासंगिक पैराग्राफ नीचे पुनरुत्पादित किए जा रहे हैं:

"14. **ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम नर्भरम पावर एंड स्टील (पी) लिमिटेड** [ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम नर्भरम पावर एंड स्टील (पी) लिमिटेड (2018) 6 एससीसी 534: (2018) 3 एससीसी (सिविल) 484] में, इस न्यायालय द्वारा यह देखा और माना गया है कि पक्षकार पॉलिसी में गिनाए गए खंडों से बंधे हैं और न्यायालय किसी खंड को नए सिरे से लिखकर उसमें किसी साम्या को प्रत्यारोपित नहीं करता है। यह आगे देखा और माना गया है कि एक मध्यस्थता खंड की कड़ाई से व्याख्या की जानी आवश्यक है। खंड में कोई भी अभिव्यक्ति मध्यस्थता की मंशा को स्पष्ट रूप से व्यक्त करनी चाहिए। यह उन स्थितियों को भी रेखांकित कर सकता है जिनमें मध्यस्थता खंड को प्रभावी नहीं किया जा सकता है। यह

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

आगे देखा गया है कि यदि कोई खंड यह निर्धारित करता है कि कुछ परिस्थितियों में कोई मध्यस्थता नहीं हो सकती है और वे प्रदर्शन योग्य रूप से स्पष्ट हैं, तो मध्यस्थ की नियुक्ति से संबंधित विवाद को समाप्त किया जाना चाहिए (पैराग्राफ 10-23)।

15. राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास एवं निवेश निगम बनाम डायमंड एंड जेम डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन लिमिटेड [राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास एवं निवेश निगम बनाम डायमंड एंड जेम डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन लिमिटेड (2013) 5 एससीसी 470:(2013) 3 एससीसी (सिविल) 153] में, इस न्यायालय द्वारा यह देखा और माना गया है कि एक पक्षकार अनुबंध की शर्तों के अंतर्गत आने वाली चीजों से अधिक कुछ भी दावा नहीं कर सकता है, इस कारण से कि अनुबंध दो पक्षों के बीच एक लेन-देन है और खुली आँखों से तथा अनुबंध की प्रकृति को समझकर किया गया है। यह आगे देखा गया है कि इस प्रकार अनुबंध दो या दो से अधिक पक्षों के बीच एक समझौते की संज्ञा होने के कारण, इसकी व्याख्या तब तक शाब्दिक अर्थ देते हुए की जानी चाहिए जब तक कि उसमें कोई अस्पष्टता न हो। अनुबंध की व्याख्या अनुबंध में निहित शब्दों को वास्तविक अर्थ देते हुए की जानी चाहिए और न्यायालय के लिए एक नया अनुबंध बनाना अनुमेय नहीं है, चाहे वह कितना भी उचित क्यों न हो, यदि पक्षकारों ने इसे स्वयं नहीं बनाया है। यह आगे देखा गया है कि अनुबंध की शर्तों की व्याख्या अनुबंध की प्रकृति को बदले बिना कड़ाई से की जानी चाहिए क्योंकि यह किसी भी पक्ष के हित को प्रतिकूल रूप से प्रभावित कर सकती है (पैराग्राफ 23)।

16. हर्षा कंस्ट्रक्शंस बनाम यूनियन ऑफ इंडिया [हर्षा कंस्ट्रक्शंस बनाम यूनियन ऑफ इंडिया (2014) 9 एससीसी 246: (2014) 4 एससीसी (सिव) 803] में, इस न्यायालय द्वारा पैराग्राफ 18 और 19 में निम्नानुसार देखा और माना गया है: (एससीसी पृष्ठ 251)

"18. मध्यस्थता एक अनुबंध से उत्पन्न होती है और जब तक कि एक विशिष्ट लिखित अनुबंध न हो, मध्यस्थता के संबंध में एक अनुबंध का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। अधिनियम की धारा 7(3) स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट करती है कि मध्यस्थता के संबंध में अनुबंध लिखित में होना चाहिए। इस प्रकार, जहाँ तक अनुबंध के खंड 39 में संदर्भित विवादों का संबंध है, मध्यस्थ

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के लिए उक्त विवादों पर मध्यस्थता करना खुला नहीं था क्योंकि वहाँ एक विशिष्ट खंड था जिसके द्वारा उक्त विवादों को "अपवर्जित" किया गया था। इसके अलावा, जब कानून विशेष रूप से एक विशेष तरीके से अनुबंध के गठन के संबंध में प्रावधान करता है, तो अनुबंध के संबंध में कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता है यदि अनुबंध अधिनियम के तहत निर्धारित तरीके से नहीं किया गया है।

19. यदि कोई गैर-मध्यस्थता योग्य विवाद मध्यस्थ को संदर्भित किया जाता है और भले ही मध्यस्थ द्वारा ऐसे विवाद के संबंध में कोई वाद-पद तैयार किया जाता है, तो हमारी राय में, इस आशय का कोई अनुमान या निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है कि पक्षकार मध्यस्थ को मुद्दा संदर्भित करने के लिए सहमत हुए थे। वर्तमान मामले में, प्रतिवादी अधिकारियों ने मध्यस्थ के समक्ष उपरोक्त मुद्दे की मध्यस्थता योग्यता के संबंध में एक आपत्ति उठाई थी और फिर भी मध्यस्थ ने उक्त "अपवर्जित" विवाद पर अपना निर्णय दिया था। हमारी राय में, मध्यस्थ उक्त "अपवर्जित" विवाद का निर्णय नहीं कर सकता था। इसलिए, हम मानते हैं कि मध्यस्थ के लिए उन मुद्दों का निर्णय करना खुला नहीं था जो मध्यस्थता योग्य नहीं थे और अधिनिर्णय, जहाँ तक यह गैर-मध्यस्थता योग्य विवादों के संबंध में विवादों से संबंधित है, कानून में खराब है और इसके द्वारा रद्द किया जाता है।"

19. इस प्रश्न पर कि विवाद के गैर-मध्यस्थता योग्य होने का निर्णय कौन करता है, इस बिंदु पर पूर्व के निर्णयों, विशेष रूप से गारवारे वॉल रोप्स लिमिटेड बनाम कोस्टल मरीन कंस्ट्रक्शंस एंड इंजीनियरिंग लिमिटेड [गारवारे वॉल रोप्स लिमिटेड बनाम कोस्टल मरीन कंस्ट्रक्शंस एंड इंजीनियरिंग लिमिटेड (2019) 9 एससीसी 209:(2019) 4 एससीसी (सिविल) 324], यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम हुंडई इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड [यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम हुंडई इंजीनियरिंग एंड कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड (2018) 17 एससीसी 607: (2019) 2 एससीसी (सिविल) 530] और नर्भरम पावर एंड स्टील [ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम नर्भरम पावर एंड स्टील (पी) लिमिटेड, (2018) 6 एससीसी 534: (2018) 3 एससीसी (सिव) 484: (2021) 1 एससीसी (सिविल) 549] के

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

निर्णयों का संदर्भ देने और उन पर विचार करने के बाद, विद्या ड्रोलिया मामले [विद्या ड्रोलिया बनाम दुर्गा ट्रेडिंग कॉर्पोरेशन, (2021) 2 एससीसी 1: (2021) 1 एससीसी (सिविल) 549] में यह देखा और माना गया है कि इस जांच से संबंधित गैर-मध्यस्थता योग्यता का प्रश्न, कि क्या विवाद मध्यस्थता खंड द्वारा शासित था, संदर्भ के चरण पर ही न्यायालयों द्वारा जांचा जा सकता है और इसे अनुत्तरित नहीं छोड़ा जा सकता कि इसकी जांच और निर्णय मध्यस्थ अधिकरण द्वारा किया जाए। इसके पश्चात, पैराग्राफ 153 में, यह देखा और माना गया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 11 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "मध्यस्थता समझौते का अस्तित्व" में मध्यस्थता समझौते की वैधता का पहलू शामिल होगा, हालांकि संदर्भ के चरण में न्यायालय प्रथम दृष्टया परीक्षण लागू करेगा। यह आगे देखा गया है कि विचारणीय और विवादित तथ्यों तथा अच्छे तार्किक रूप से बहस योग्य मामले आदि की स्थितियों में, न्यायालय पक्षकारों को मध्यस्थता समझौते का पालन करने के लिए बाध्य करेगा क्योंकि अधिकारिता और गैर-मध्यस्थता योग्यता के प्रश्न सहित विवादों का निर्णय करने की प्राथमिक अधिकारिता और प्राधिकार मध्यस्थ अधिकरण के पास है।'

40. सर्वोच्च न्यायालय को पम डेवलपमेंट प्राइवेट लिमिटेड बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, (2024) 10 एससीसी 715 में एक समझौते में अपवर्जित/निषेधात्मक खंडों के प्रभाव पर विचार करने का अवसर मिला और इस संबंध में उसने निम्नानुसार माना:

"12. यह दलील प्रभावशाली है, लेकिन अनुबंध के खंड स्वतः स्पष्ट हैं। वास्तव में, उच्च न्यायालय ने वही किया जो मध्यस्थ को करना चाहिए था। जांच करें कि अनुबंध क्या प्रावधान करता है। यह व्याख्या का विषय भी नहीं है। बिना किसी अपवाद के, प्रत्येक मध्यस्थ अधिकरण और न्यायालय का समान रूप से यह कर्तव्य है, क्योंकि अनुबंध ही कानूनी संबंध की नींव है। अनुबंध में ऊपर संदर्भित खंडों पर विचार करने के बाद उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अनुबंध के "विशेष नियमों और शर्तों" के तहत निष्क्रिय पड़ी मशीनरी आदि के मद में किसी भी राशि को स्वीकृत करना प्रतिबंधित है। मध्यस्थ ने संविदात्मक प्रावधानों का संदर्भ तक नहीं दिया और जिला न्यायालय ने ऊपर उद्धृत किए गए एक मानक वाक्यांश के साथ धारा 34 के

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

तहत आपत्तियों को खारिज कर दिया। धारा 37 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय ने अपना कर्तव्य निभाया और हमारी राय है कि उच्च न्यायालय के निष्कर्ष सही हैं और उनमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।"

29. उपरोक्त निर्विवाद तथ्यों के आलोक में, यह स्पष्ट है कि एकमात्र मध्यस्थ के पास एक ऐसे अज्ञात क्षेत्र में प्रवेश करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं था जो बाद के अनुबंध संख्या 107 वर्ष 2013-2014 द्वारा व्याप्त था, जिसे कभी संदर्भ की विषय-वस्तु नहीं बनाया गया था। इसलिए, यदि बाद के अनुबंध से कोई विवाद उत्पन्न हुआ था, तो एकमात्र मध्यस्थ द्वारा उस पर विचार या न्यायनिर्णयन नहीं किया जा सकता था। इस प्रकार, एकमात्र मध्यस्थ द्वारा ऐसे दावे का संज्ञान लेने का प्रयास उसके क्षेत्राधिकार से परे था।

30. इस संबंध में, **साल उद्योग प्राइवेट लिमिटेड (उपरोक्त)** में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियां प्रासंगिक हैं और पैराग्राफ 26 में उसने निम्नानुसार माना:-

"26. संक्षेप में कहें तो, पक्षकारों को शासित करने वाले समझौते में खंड 6(बी) के अस्तित्व से इनकार नहीं किया गया है, और न ही वास्तविक व्यय की कटौती के बाद साल के बीजों की कीमत में 10% पर्यवेक्षण शुल्क लगाने और उसे जोड़ने के संबंध में मध्य प्रदेश सरकार द्वारा जारी दिनांक 27-7-1987 के परिपत्र को लागू करने पर प्रतिवादी कंपनी द्वारा कोई सवाल उठाया गया है। इसलिए, हमारा विचार है कि पक्षकारों को शासित करने वाले अनुबंध की शर्तों के अनुसार निर्णय लेने में विद्वान एकमात्र मध्यस्थ की विफलता निश्चित रूप से "प्रत्यक्ष अवैधता के आधार" को आकर्षित करेगी, क्योंकि उक्त अनदेखी 1996 के अधिनियम की धारा 28(3) के घोर उल्लंघन के समान है, जो मध्यस्थ अधिकरण को अधिनिर्णय देते समय अनुबंध की शर्तों को ध्यान में रखने का निर्देश देती है। उक्त "प्रत्यक्ष अवैधता" न केवल अधिनिर्णय के मुख पर स्पष्ट है, बल्कि यह मामले की जड़ तक जाती है और हस्तक्षेप की हकदार है। तदनुसार, वर्तमान अपील को आंशिक रूप से स्वीकार किया जाता है और आक्षेपित अधिनिर्णय को, जहाँ तक इसने साल के बीजों की कीमत की गणना करते समय अपीलकर्ता राज्य द्वारा प्रतिवादी कंपनी से वसूल किए गए "पर्यवेक्षण शुल्क" को उसके द्वारा किए गए व्यय के हिस्से

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के रूप में घटाने की अनुमति दी है, रद्द और अपास्त किया जाता है, क्योंकि यह पक्षकारों को शासित करने वाले अनुबंध की शर्तों और प्रासंगिक परिपत्र के सीधे विरोध में है। आक्षेपित निर्णय दिनांक 21-10-2009 को उपरोक्त सीमा तक संशोधित किया जाता है।"

इसी तरह की टिप्पणियां सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पीएसए सीकल टर्मिनल्स प्रा. लिमिटेड (उपरोक्त) के मामले में भी की गई थीं।

31. इस प्रकार, जहाँ तक 6,12,000/- रुपये की सुरक्षा राशि की वापसी के दावे को स्वीकार करने से संबंधित अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के पहले तर्क का संबंध है, उसमें दम है और यह इस न्यायालय द्वारा स्वीकार किया जाता है।

32. इस स्तर पर यह नोट करना भी प्रासंगिक होगा कि वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ को मामले के इस पहलू पर विचार करना चाहिए था। हालांकि, उसने 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करने में अपने कर्तव्यों का परित्याग किया है। वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ ने केवल सर्वोच्च न्यायालय के कुछ निर्णयों पर भरोसा करते हुए अधिनिर्णय में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया, बिना यह ध्यान दिए कि क्या मध्यस्थ एक अलग अनुबंध के संबंध में दावा प्रदान या स्वीकार कर सकता था जिसके लिए कोई संदर्भ ही नहीं किया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ ने अपने न्यायिक विवेक का प्रयोग नहीं किया और क्षेत्राधिकार के यांत्रिक प्रयोग में याचिका को खारिज कर दिया, जिसकी सराहना नहीं की जा सकती, बल्कि यह इसकी खराब कार्यप्रणाली को दर्शाता है।

33. यदि कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान से संबंधित अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के तर्क के दूसरे हिस्से की जांच की जाए, तो यह प्रकट होगा कि पक्षकारों के बीच हुए समझौते (जिसकी एक प्रति रिकॉर्ड पर है) से यह संकेत मिलता है कि यह अनुबंध अपीलकर्ता संस्थान द्वारा संस्थान के भूदृश्य (लैंडस्केप) के रखरखाव के उद्देश्य से दिया गया था। समझौते के खंड 3 और 4 निम्नानुसार हैं:-

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

"3. ठेकेदार के श्रमिकों को किसी भी स्थिति में संस्थान के कर्मचारी के रूप में नहीं माना जाएगा। ठेकेदार उनके मामलों के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होगा और वैधानिक दायित्वों का अनुपालन करने के लिए बाध्य होगा। इन श्रमिकों का संस्थान के कर्मचारी के रूप में माने जाने का कोई दावा नहीं होगा।

4. ठेकेदार को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और उत्तर प्रदेश राज्य में लागू अन्य वैधानिक श्रम कानूनों, नियमों और विनियमों का पालन करना होगा। मुख्य नियोक्ता के रूप में संस्थान पर उत्पन्न होने वाली किसी भी देनदारी को ठेकेदार के बिलों से काट लिया जाएगा और पूरी राशि ठेकेदार की सुरक्षा राशि तथा बाद के मासिक बिलों से वसूल की जाएगी।"

34. ये खंड स्पष्ट रूप से इंगित करते हैं कि ठेकेदार (यहाँ प्रतिवादी के संदर्भ में) के श्रमिकों को संस्थान के कर्मचारी के रूप में नहीं माना जाएगा और किसी भी स्थिति में ठेकेदार अपने मामलों के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होगा। वह वैधानिक अनुपालनों को पूरा करने के लिए बाध्य था। श्रमिकों का संस्थान के कर्मचारी के रूप में माने जाने का कोई दावा नहीं हो सकता था। इसी प्रकार, समझौते के खंड 4 ने ठेकेदार को न्यूनतम मजदूरी अधिनियम और उत्तर प्रदेश राज्य में लागू अन्य वैधानिक श्रम कानूनों का पालन करने का निर्देश दिया था।

35. अनुबंध ने आगे यह संकेत दिया कि अपीलकर्ता समझौते के खंड 42 में उल्लिखित दरों के अनुसार प्रतिवादी को भुगतान करने के लिए ही उत्तरदायी था। बेहतर समझ के लिए, अनुबंध के खंड 39 से 41 को नीचे पुनरुत्पादित किया जा रहा है:-

"39. भुगतान अनुसूची:- रखरखाव कार्य सामान्यतः

भुगतान उद्यानिकी रखरखाव कार्यों के मासिक आधार पर होगा, जो प्रत्येक माह उद्यानिकी अधिकारी द्वारा जारी कार्य आदेश के विपरीत नोडल अधिकारी द्वारा कार्य के सत्यापन और माप के बाद बिल प्रस्तुत करने पर ही किया जाएगा।

40. ठेकेदार को यह सुनिश्चित करना होगा कि उसके श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान संस्थान के निदेशक द्वारा नामित संस्थान के प्रतिनिधि की उपस्थिति में किया जाए।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



41. ठेकेदार द्वारा दर के साथ ईपीएफ जमा रसीद और भुगतान वाउचर प्रस्तुत करने के बाद संस्थान द्वारा भुगतान जारी किया जाएगा।"

36. ऊपर पुनरुत्पादित किए गए उपरोक्त खंडों को यदि एक साथ पढ़ा जाए, तो यह संकेत मिलेगा कि इन्हें प्रतिवादी के लिए एक निवारक के रूप में कार्य करने और आवश्यक श्रम कल्याण कानूनों का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए शामिल किया गया था। इसने किसी भी तरह से प्रतिवादी के श्रमिकों और अपीलकर्ता के बीच एक नियोक्ता या मुख्य नियोक्ता के रूप में कोई संबंध स्थापित नहीं किया।

37. इसी तरह, दिनांक 01.10.2007 और 30.10.2007 के पत्र, जिन्हें खंड 23 के निबंधनों के अनुसार अनुबंध का हिस्सा बनाया गया था, यह दर्शाएंगे कि वे केवल करों और शुल्कों से संबंधित हैं तथा उनका विस्तार किसी अन्य श्रम कानून अनुपालन पर नहीं किया जा सकता है। यह निर्विवाद है कि कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान को कर या किसी शुल्क के रूप में नहीं माना जा सकता है।

38. अपीलकर्ता ने कोई श्रम अनुबंध नहीं दिया था, जिसका अर्थ यह हो कि प्रतिवादी को अपीलकर्ता को श्रमिक प्रदान करने के लिए एक आउटसोर्सिंग एजेंसी के रूप में कार्य करना था; बल्कि दिनांक 16.04.2008 के अनुबंध का पूरा स्वरूप और बनावट प्रतिवादी को एक भूदृश्य रखरखाव समझौता देने की थी, जिसे विशेष रूप से प्रतिवादी को स्वयं और अपने स्वयं के श्रमिकों के माध्यम से निष्पादित करना था।

39. ऐसी परिस्थितियों में, यदि प्रतिवादी ने कोई कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान किया था, तो यह प्रतिवादी और उसके श्रमिकों के बीच का मामला था। समझौता प्रतिवादी के श्रमिकों और अपीलकर्ता के बीच नियोक्ता और कर्मचारी का कोई संबंध बनाने की परिकल्पना नहीं करता था। अतः ऐसी परिस्थितियों में, कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान के किसी भी दावे को एकमात्र मध्यस्थ द्वारा स्वीकार नहीं किया जा सकता था।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

40. एकमात्र मध्यस्थ द्वारा वाद-पद संख्या 5 और 12 पर विचार करते समय दिए गए निष्कर्षों को देखने से यह प्रकट होगा कि मध्यस्थ ने समझौते का पूरी तरह से गलत अर्थ लगाया है और वह अनुबंध की शर्तों से परे चला गया है, जिससे यह अधिनिर्णय न्यायिक हस्तक्षेप के योग्य बन जाता है। ठीक उसी समय वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ ने भी वही भूल की और वह अनुबंध की शर्तों तथा एकमात्र मध्यस्थ द्वारा उसका अर्थ लगाए जाने के तरीके पर विचार करने में विफल रहा। वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ ने जिस तरीके से केवल संबंधित दलीलों पर विचार करके, सर्वोच्च न्यायालय के कुछ निर्णयों को नोट करके और वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर उसकी प्रयोज्यता की सराहना किए बिना अधिनियम, 1996 की धारा 34 के तहत याचिका का फैसला किया और याचिका को खारिज कर दिया, उसे कानून में सराहा नहीं जा सकता। इस प्रकार, एकमात्र मध्यस्थ द्वारा स्वीकृत और वाणिज्यिक न्यायालय संख्या 1, लखनऊ द्वारा संपुष्ट किया गया कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान से संबंधित दावा कानून में टिकाऊ नहीं है और निरस्त किए जाने योग्य है।

41. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने हालांकि लगाई गई शास्ति के संदर्भ में अपीलकर्ता द्वारा की गई कटौती से संबंधित दावे के बारे में दलीलें दी थीं, लेकिन वे उसे साबित नहीं कर सके और उन्होंने स्पष्ट रूप से बयान दिया कि वे अपनी तीसरी दलील पर जोर नहीं देना चाहते हैं। इसलिए यह न्यायालय इस पर आगे कोई विचार करने का प्रस्ताव नहीं करता है और यह कहना पर्याप्त होगा कि उक्त आधार को 'बल न दिए जाने' के रूप में खारिज माना जाएगा।

42. यह न्यायालय ऊपर दी गई विस्तृत चर्चा के आलोक में पाता है कि स्वीकृत किए गए दावों में से दो दावों को स्वीकार नहीं किया जा सकता था। अब, इसके परिणामस्वरूप यह प्रश्न उठता है कि क्या पूरे अधिनिर्णय को रद्द करने की आवश्यकता है या अधिनिर्णय के आपत्तिजनक हिस्से को अलग करके और शेष हिस्से को सुरक्षित रखते हुए दिनांक 20.08.2020 के अधिनिर्णय को संशोधित किया जा सकता है।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



43. उक्त दुविधा को दूर करने के लिए, यह न्यायालय सबसे पहले यह जांचना उचित समझता है कि कौन से दावे स्वीकार किए गए हैं और संदर्भ की सुगमता के लिए, अधिनिर्णय के समापन भाग को नीचे पुनरुत्पादित किया जा रहा है:-

"दावेदार ने अपने मूल दावे में खर्चों सहित 31,04,533/- रुपये और सुरक्षा राशि का दावा किया है।

यह दर्शाता है कि दावेदार दावे की राशि को लेकर अनिश्चित और भ्रमित है।

(i) प्रति वर्ष 48,000/- रुपये की दर से डीजल लॉन मूवर की आपूर्ति न करने पर तीन वर्षों के लिए 1,44,000/- रुपये और उस पर 18% ब्याज।

(ii) दावेदार ईपीएफ प्रतिपूर्ति के संबंध में 6,17,629/- रुपये और उस पर 18% ब्याज प्राप्त करने का भी हकदार है।

(iii) दावेदार 57,521/- रुपये के अवैध जुर्माने (शास्ति) को भी प्राप्त करने का हकदार है जो विपक्षी दल द्वारा लगाया गया था और उसके बिल से काटा गया था, साथ ही उस पर 18% ब्याज।

(iv) दावेदार 6,12,000/- रुपये की सुरक्षा राशि की वापसी और 9,456/- रुपये के बिल को 18% वार्षिक ब्याज के साथ प्राप्त करने का भी हकदार है।

(v) दावेदार तीसरे वर्ष के 1,74,996/- रुपये के बिल में 5% की वृद्धि और उस पर 18% ब्याज प्राप्त करने का भी हकदार है।

(vi) दावेदार अपनी अधिवक्ता फीस और अन्य खर्चों के रूप में 5,15,000/- रुपये प्राप्त करने का भी हकदार है।

अतः, कुल राशि जिसके लिए दावेदार हकदार है, 21,30,602/- रुपये है।"

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



44. दावे की प्रकृति और एकमात्र मध्यस्थ द्वारा उन पर अलग-अलग विचार किए जाने के तरीके तथा दावों को अलग-अलग मदों के तहत दिए जाने को ध्यान में रखते हुए, यह इस न्यायालय को यह जांचने की अनुमति दे सकता है कि क्या पूरे अधिर्णय को रद्द करने की आवश्यकता है या केवल आपतिजनक हिस्से को अलग किया जा सकता है और अधिर्णय को उपरोक्त सीमा तक संशोधित किया जा सकता है।

45. 1996 के अधिनियम की धारा 34 के सीधे पठन से यह संकेत मिलेगा कि अधिनियम की धारा 34 में प्रयुक्त भाषा "मध्यस्थ अधिर्णय को अपास्त (रद्द) करने के लिए आवेदन" है। क्या अधिनियम की धारा 34 के निबंधनों के अनुसार न्यायालयों के पास अधिर्णय को संशोधित करने की शक्ति है, इस विशिष्ट प्रश्न को सर्वोच्च न्यायालय की एक संविधान पीठ के समक्ष गायत्री बालसामी बनाम आईएसजी नोवासॉफ्ट टेक्नोलॉजीज लिमिटेड, (2025) 7 एससीसी 1 में संदर्भित किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने अधिनियम के प्रावधानों और कानून पर विचार करने के बाद माना कि न्यायालयों के पास सीमित परिस्थितियों में पृथक्करणीयता के सिद्धांत को लागू करके अधिर्णय को संशोधित करने की अधिनियम के तहत सीमित शक्तियाँ हैं। वह सीमित दायरा और परिस्थितियाँ क्या होंगी, इसे गायत्री बालसामी (उपरोक्त) में बहुमत के निर्णय में समझाया गया था। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों और दिशानिर्देशों को संक्षेप में निम्नानुसार प्रस्तुत किया जा सकता है:-

(i) केवल पृथक किए जाने योग्य अधिर्णय ही संशोधन के योग्य हैं।

एक संयुक्त या अविभाज्य मध्यस्थ अधिर्णय को संशोधित नहीं किया जा सकता है। संशोधन केवल वहीं अनुमेय है जहाँ दावे या अधिर्णय के हिस्से कानूनी और व्यावहारिक रूप से वैध हिस्से से अलग किए जा सकते हों। ऐसे मामलों में, न्यायालय वैध हिस्से को सुरक्षित रखते हुए अमान्य हिस्से को अलग कर सकता है। यह मध्यस्थ अधिर्णय को संशोधित करने की सीमित शक्ति के प्रयोग के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित आवश्यक सुरक्षा उपायों में से एक है।

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(ii) जिस त्रुटि को सुधारा जाना है, वह अभिलेख के मुखपृष्ठ पर प्रत्यक्ष और स्पष्ट होनी चाहिए।

सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया है कि संशोधन केवल स्पष्ट और स्वतः प्रमाणित त्रुटियों, जैसे कि लिपिकीय, गणना संबंधी, या टंकण संबंधी गलतियों को सुधारने तक ही सीमित है। संशोधन केवल वहीं अनुमेय है जहाँ न्यायालय को सुधार के संबंध में कोई अनिश्चितता या संदेह न हो; यदि कथित त्रुटि विवादास्पद है या रिकॉर्ड के मुख पर स्पष्ट नहीं है, तो न्यायालय के पास अधिनिर्णय को संशोधित करने की अधिकारिता का अभाव होता है।

(iii) अधिनिर्णय के बाद के ब्याज को सुधारने या समायोजित करने के लिए संशोधन अनुमेय है।

न्यायालय मध्यस्थ अधिनिर्णय को संशोधित कर सकते हैं जहाँ ऐसा संशोधन मध्यस्थ अधिकरण के मूल निष्कर्षों को प्रभावित किए बिना, केवल अधिनिर्णय के बाद के ब्याज के सुधार या समायोजन तक सीमित हो।

(iv) जहाँ संशोधन अनुमेय न हो, वहाँ मामले को वापस भेजा जाना चाहिए।

उन मामलों में जहाँ त्रुटि को उपरोक्त सुरक्षा उपायों के भीतर नहीं सुधारा जा सकता है और यदि इसके लिए गुणों पर समीक्षा या पुनः न्यायनिर्णयन की आवश्यकता होगी, तो न्यायालय को अधिनिर्णय को संशोधित करने से बचना चाहिए और जहाँ कानून में अनुमेय हो, मामले को मध्यस्थ अधिकरण के पास वापस भेज देना चाहिए।

46. यह न्यायालय उपरोक्त सिद्धांतों को लागू करते हुए पाता है कि यह एक उपयुक्त मामला है जहाँ कुछ दावे जिन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता था, उन्हें अधिनिर्णय से अलग किया जा सकता है और पूरे अधिनिर्णय को रद्द करने के बजाय शेष भाग को सुरक्षित रखा जा सकता है। तदनुसार, कर्मचारी भविष्य निधि अंशदान प्रतिपूर्ति के मद में 6,17,629/- रुपये के दावे को 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ (जो ऊपर पैराग्राफ 43 के क्रम संख्या 2 पर है) और सुरक्षा राशि की वापसी से संबंधित 6,12,000/- रुपये के दावे तथा 9,456/- रुपये के बिल को

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



18% प्रति वर्ष ब्याज के साथ (जो ऊपर पैराग्राफ 43 के क्रम संख्या 4 पर है) अस्वीकार किया जाता है और इन्हें खारिज माना जाएगा। अधिनिर्णय के अनुसार शेष दावे, जो ऊपर पैराग्राफ 43 में उल्लिखित हैं, यथावत और सुरक्षित रहेंगे। तदनुसार, दिनांक 20.08.2020 का अधिनिर्णय उपरोक्त सीमा तक संशोधित माना जाएगा।

47. प्रतिवादी के लिए यह खुला रहेगा कि यदि कानून अनुमति देता है, तो वह वर्ष 2013-2014 के अनुबंध संख्या 107 से संबंधित सुरक्षा राशि की वापसी और दावों के किसी अन्य लंबित बिल से संबंधित अपने दावों को उपयुक्त मंच/न्यायालय के समक्ष उठाए। यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय ने प्रतिवादी के किसी भी ऐसे दावे के संबंध में गुणों पर कोई टिप्पणी नहीं की है जो वर्ष 2013-2014 के अनुबंध संख्या 107 से संबंधित हो सकता है और यदि प्रतिवादी उक्त अनुबंध के संबंध में अपने दावे उठाता है, तो कहने की आवश्यकता नहीं है कि उस पर उसके अपने गुणों के आधार पर विचार किया जाएगा।

48. दिनांक 20.08.2020 के अधिनिर्णय में किए गए उपरोक्त संशोधन के अधीन, अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है। तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

(न्यायमूर्ति जसप्रीत सिंह)

(मुख्य न्यायाधीश अरुण भंसाली)

18 फ़रवरी, 2026

एएनके

अस्वीकरण: "अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।